6- आत्मसंयमयोग

ध्यानयोग

Dhyāna-yoga

श्रीभगवानुवाच

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः ।

स सन्न्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ॥ १ ॥

śrī-bhagavān uvāca
anāśritaḥ karma-phalaṁ
kāryaṁ karma karoti yaḥ
sa sannyāsī ca yogī ca
na niragnir na cākriyaḥ

The Supreme Personality of Godhead said: One who is unattached to the fruits of his work and who works as he is obligated is in the renounced order of life, and he is the true mystic, not he who lights no fire and performs no duty.

श्रीभगवान् ने कहा – जो पुरुष अपने कर्मफल के प्रति अनासक्त है और जो अपने कर्तव्य का पालन करता है, वही संन्यासी और असली योगी है | वह नहीं, जो न तो अग्नि जलाता है और न कर्म करता है |

यं सन्न्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव ।
न ह्यसन्न्यस्तसङ्कल्पो योगी भवति कश्चन ॥ २ ॥

yaṁ sannyāsam iti prāhur
yogaṁ taṁ viddhi pāṇḍava
na hy asannyasta-saṅkalpo
yogī bhavati kaścana

What is called renunciation you should know to be the same as yoga, or linking oneself with the Supreme, O son of Pāṇḍu, for one can never become a yogī unless he renounces the desire for sense gratification.

हे पाण्डुपुत्रजिसे संन्यास कहते हैं उसे ही तुम योग अर्थात् ! परब्रह्म से युक्त होना जानो क्योंकि इन्द्रियतृप्ति के लिए इच्छा को त्यागे बिना कोई कभी योगी नहीं हो सकता|

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते ।
योगारूढस्यतस्यैव शमः कारणमुच्यते ॥ ३ ॥

ārurukṣor muner yogaṁ
karma kāraṇam ucyate
yogārūḍhasya tasyaiva
śamaḥ kāraṇam ucyate

For one who is a neophyte in the eightfold yoga system, work is said to be the means; and for one who is already elevated in yoga, cessation of all material activities is said to be the means.

अष्टांगयोग के नवसाधक के लिए कर्म साधन कहलाता है और योगसिद्ध पुरुष के लिए समस्त भौतिक कार्यकलापों का परित्याग ही साधन कहा जाता है ।

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते ।
सर्वसङ्कल्पसन्न्यासी योगारूढस्तदोच्यते ॥ ४ ॥

yadā hi nendriyārtheṣu
na karmasv anuṣajjate
sarva-saṅkalpa-sannyāsī
yogārūḍhas tadocyate

A person is said to be elevated in yoga when, having renounced all material desires, he neither acts for sense gratification nor engages in fruitive activities.

जब कोई पुरुष समस्त भौतिक इच्छाओं का त्यागा करके न तो इन्द्रियतृप्ति के लिए कार्य करता है और न सकामकर्मों में प्रवृत्त होता है तो वह योगारूढ कहलाता है ।

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥ ५ ॥

uddhared ātmanātmānaṁ
nātmānam avasādayet
ātmaiva hy ātmano bandhur
ātmaiva ripur ātmanaḥ

One must deliver himself with the help of his mind, and not degrade himself. The mind is the friend of the conditioned soul, and his enemy as well.

मनुष्य को चाहिए कि अपने मन की सहायता से अपना उद्धार करे और अपने को नीचे न गिरने दे | यह मन बद्धजीव का मित्र भी है और शत्रु भी |

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥ ६ ॥

bandhur ātmātmanas tasya
yenātmaivātmanā jitaḥ
anātmanas tu śatrutve
vartetātmaiva śatru-vat

For him who has conquered the mind, the mind is the best of friends; but for one who has failed to do so, his mind will remain the greatest enemy.

जिसने मन को जीत लिया है उसके लिए मन सर्वश्रेष्ठ मित्र है, किन्तु जो ऐसा नहीं कर पाया इसके लिए मन सबसे बड़ा शत्रु बना रहेगा |

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः ।

शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः ॥ ७ ॥

jitātmanaḥ praśāntasya
paramātmā samāhitaḥ
śītoṣṇa-sukha-duḥkheṣu
tathā mānāpamānayoḥ

For one who has conquered the mind, the Supersoul is already reached, for he has attained tranquillity. To such a man happiness and distress, heat and cold, honor and dishonor are all the same.

जिसने मन को जीत लिया है, उसने पहले ही परमात्मा को प्राप्त कर लिया है, क्योंकि उसने शान्ति प्राप्त कर ली है | ऐसे पुरुष के लिए सुखदुख-, सर्दी अपमान एक से हैं-गर्मी एवं मान-|

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः ।

युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्ट्राश्मकाञ्चनः ॥ ८ ॥

jñāna-vijñāna-tṛptātmā
kūṭa-stho vijitendriyaḥ
yukta ity ucyate yogī
sama-loṣṭrāśma-kāñcanaḥ

A person is said to be established in self-realization and is called a yogī [or mystic] when he is fully satisfied by virtue of acquired knowledge and realization. Such a person is situated in transcendence and is self-controlled. He sees everything – whether it be pebbles, stones or gold – as the same.

वह व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार को प्-राप्त तथा योगी कहलाता है जो अपने अर्जित ज्ञान तथा अनुभूति से पूर्णतया सन्तुष्ट रहता है | ऐसा व्यक्ति अध्यात्म को प्राप्त तथा जितेन्द्रिय कहलाता है | वह सभी वस्तुओं को – चाहे वे कंकड़ हों, पत्थर हों या कि सोना – एकसमान देखता है |

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।

साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥ ९ ॥

suhṛn-mitrāry-udāsīna-
madhyastha-dveṣya-bandhuṣu

sādhuṣv api ca pāpeṣu
sama-buddhir viśiṣyate

A person is considered still further advanced when he regards honest well-wishers, affectionate benefactors, the neutral, mediators, the envious, friends and enemies, the pious and the sinners all with an equal mind.

जब मनुष्य निष्कपट हितैषियों, प्रिय मित्रों, तटस्थों, मध्यस्थों, ईर्ष्यालुओं, शत्रुओं तथा मित्रों, पुण्यात्माओं एवं पापियों को समान भाव से देखता है, तो वह और भी उन्नत माना जाता है |

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः ।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः ॥ १० ॥

yogī yuñjīta satatam
ātmānaṁ rahasi sthitaḥ
ekākī yata-cittātmā
nirāśīr aparigrahaḥ

A transcendentalist should always engage his body, mind and self in relationship with the Supreme; he should live alone in a secluded place and should always carefully control his mind. He should be free from desires and feelings of possessiveness.

योगी को चाहिए कि वह सदैव अपने शरीर, मन तथा आत्मा को परमेश्वर में लगाए, एकान्त स्थान में रहे और बड़ी सावधानी के साथ अपने मन को वश में करे | उसे समस्त आकांक्षाओं तथा संग्रहभाव से मुक्त होना चाहिए |

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मन: ।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ ११ ॥
तत्रैकाग्रं मन: कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रिय ।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥ १२ ॥

śucau deśe pratiṣṭhāpya
sthiram āsanam ātmanaḥ
nāty-ucchritaṁ nāti-nīcaṁ
cailājina-kuśottaram

tatraikāgraṁ manaḥ kṛtvā
yata-cittendriya-kriyaḥ
upaviśyāsane yuñjyād
yogam ātma-viśuddhaye

To practice yoga, one should go to a secluded place and should lay kuśa grass on the ground and then cover it with a deerskin and a soft cloth. The seat should be neither too high nor too low and should be situated in a sacred place. The yogī

should then sit on it very firmly and practice yoga to purify the heart by controlling his mind, senses and activities and fixing the mind on one point.

योगाभ्यास के लिए योगी एकान्त स्थान में जाकर भूमि पर कुशा बिछा दे और फिर उसे मृगछाला से ढके तथा ऊपर से मुलायम वस्त्र बिछा दे | आसन न तो बहुत ऊँचा हो, न बहुत नीचा | यह पवित्र स्थान में स्थित हो | योगी को चाहिए कि इस पर दृढ़तापूर्वक बैठ जाय और मन, इन्द्रियों तथा कर्मों को वश में करते हुए तथा मन को एक बिन्दु पर स्थित करके हृदय को शुद्ध करने के लिए योगाभ्यास करे |

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः ।

सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥ १३ ॥

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।

मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः ॥ १४ ॥

samaṁ kāya-śiro-grīvaṁ
dhārayann acalaṁ sthiraḥ
samprekṣya nāsikāgraṁ svaṁ
diśaś cānavalokayan

One should hold one's body, neck and head erect in a straight line and stare steadily at the tip of the nose. Thus, with an unagitated, subdued mind, devoid of fear, completely free from sex life, one should meditate upon Me within the heart and make Me the ultimate goal of life.

योगाभ्यास करने वाले को चाहिए कि वह अपने शरीर, गर्दन तथा सर को सीधा रखे और नाक के अगले सिरे पर दृष्टि लगाए | इस प्रकार वह अविचलित तथा दमित मन से, भयरहित, विषयीजीवन से पूर्णतया मुक्त होकर अपने हृदय में मेरा चिन्तन करे और मुझे हि अपना चरमलक्ष्य बनाए |

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः ।
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ॥ १५ ॥

yuñjann evaṁ sadātmānaṁ
yogī niyata-mānasaḥ
śāntiṁ nirvāṇa-paramāṁ
mat-saṁsthām adhigacchati

Thus practicing constant control of the body, mind and activities, the mystic transcendentalist, his mind regulated, attains to the kingdom of God [or the abode of Kṛṣṇa] by cessation of material existence.

इस प्रकार शरीर, मन तथा कर्म में निरन्तर संयम का अब्यास करते हुए संयमित मन वाले योगी को इस भौतिक अस्तित्व की समाप्ति पर भगवद्धाम की प्राप्ति होती है ।

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नत: ।

न चातिस्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥ १६ ॥

nāty-aśnatas tu yogo ’sti
na caikāntam anaśnataḥ
na cāti-svapna-śīlasya
jāgrato naiva cārjuna

There is no possibility of one’s becoming a yogī, O Arjuna, if one eats too much or eats too little, sleeps too much or does not sleep enough.

हे अर्जुन! जो अधिक खाता है या बहुत कम खाता है, जो अधिक सोता है अथवा जो पर्याप्त नहीं सोता उसके योगी बनने की कोई सम्भावना नहीं है ।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।

युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दु:खहा ॥ १७ ॥

yuktāhāra-vihārasya
yukta-ceṣṭasya karmasu
yukta-svapnāvabodhasya
yogo bhavati duḥkha-hā

He who is regulated in his habits of eating, sleeping, recreation and work can mitigate all material pains by practicing the yoga system.

जो खाने, सोने, आमोदप्रमोद तथा काम करने की आदतों में - नियमित रहता है, वह योगाभ्यास द्वारा समस्त भौतिक क्लेशों को नष्ट कर सकता है ।

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते ।
निस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा ॥ १८ ॥

yadā viniyataṁ cittam
ātmany evāvatiṣṭhate
nispṛhaḥ sarva-kāmebhyo
yukta ity ucyate tadā

When the yogī, by practice of yoga, disciplines his mental activities and becomes situated in transcendence – devoid of all material desires – he is said to be well established in yoga.

जब योगी योगाभ्यास द्वारा अपने मानसिक कार्यकलापों को वश में कर लेता है और अध्यात्म में स्थित हो जाता है अर्थात् समस्त भौतिक इच्छाओं से रहित हो जाता है, तब वह योग में सुस्थिर कहा जाता है ।

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता ।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः ॥ १९ ॥

yathā dīpo nivāta-stho
neṅgate sopamā smṛtā
yogino yata-cittasya
yuñjato yogam ātmanaḥ

As a lamp in a windless place does not waver, so the transcendentalist, whose mind is controlled, remains always steady in his meditation on the transcendent Self.

जिस प्रकार वायुरहित स्थान में दीपक हिलताडुलता नहीं-, उसी तरह जिस योगी का मन वश में होता है, वह आत्मतत्त्व के ध्यान में सदैव स्थिर रहता है |

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया ।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥ २० ॥
सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् ।

वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः ॥ २१ ॥

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।

यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥ २२ ॥

तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम् ॥ २३ ॥

yatroparamate cittaṁ
niruddhaṁ yoga-sevayā
yatra caivātmanātmānaṁ
paśyann ātmani tuṣyati

sukham ātyantikaṁ yat tad
buddhi-grāhyam atīndriyam
vetti yatra na caivāyaṁ
sthitaś calati tattvataḥ

yaṁ labdhvā cāparaṁ lābhaṁ
manyate nādhikaṁ tataḥ
yasmin sthito na duḥkhena
guruṇāpi vicālyate

taṁ vidyād duḥkha-saṁyoga-
viyogaṁ yoga-saṁjñitam

In the stage of perfection called trance, or samādhi, one's mind is completely restrained from material mental activities by practice of yoga. This perfection is characterized by one's

ability to see the Self by the pure mind and to relish and rejoice in the Self. In that joyous state, one is situated in boundless transcendental happiness, realized through transcendental senses. Established thus, one never departs from the truth, and upon gaining this he thinks there is no greater gain. Being situated in such a position, one is never shaken, even in the midst of greatest difficulty. This indeed is actual freedom from all miseries arising from material contact.

सिद्धि की अवस्था में, जिसे समाधि कहते हैं, मनुष्य का मन योगाभ्यास के द्वारा भौतिक मानसिक क्रियाओं से पूर्णतया संयमित हो जाता है | इस सिद्धि की विशेषता यह है कि मनुष्य शुद्ध मन से अपने को देख सकता है और अपने आपमें आनन्द उठा सकता है | उस आनन्दमयी स्थिति में वह दिव्य इन्द्रियों द्वारा असीम दिव्यसुख में स्थित रहता है | इस प्रकार स्थापित मनुष्य कभी सत्य से विपथ नहीं होता और इस सुख की प्राप्ति हो जाने पर वह इससे बड़ा कोई दूसरा लाभ नहीं मानता | ऐसी स्थिति को पाकर मनुष्य बड़ीसे बड़ी कठिनाई में भी विचलित नहीं होता | यह निस्सन्देह भौतिक संसर्ग से उत्पन्न होने वाले समस्त दुःखों से वास्तविक मुक्ति है |

स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा ।

सङ्कल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ।

मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः ॥ २४ ॥

sa niścayena yoktavyo
yogo 'nirviṇṇa-cetasā
saṅkalpa-prabhavān kāmāṁs
tyaktvā sarvān aśeṣataḥ

manasaivendriya-grāmaṁ
viniyamya samantataḥ

One should engage oneself in the practice of yoga with determination and faith and not be deviated from the path. One should abandon, without exception, all material desires born of mental speculation and thus control all the senses on all sides by the mind.

मनुष्य को चाहिए कि संकल्प तथा श्रद्धा के साथ योगाभ्यास में लगे और पथ से विचलित न हो | उसे चाहिए कि मनोधर्म से उत्पन्न समस्त इच्छाओं को निरपवाद रूप से त्याग दे और इस प्रकार मन के द्वारा सभी ओर से इन्द्रियों को वश में करे |

शनैः शनैरुपरमेद्बुद्ध्या धृतिगृहीतया ।

आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत् ॥ २५ ॥

śanaiḥ śanair uparamed
buddhyā dhṛti-gṛhītayā
ātma-saṁsthaṁ manaḥ kṛtvā
na kiñcid api cintayet

Gradually, step by step, one should become situated in trance by means of intelligence sustained by full conviction, and thus the mind should be fixed on the Self alone and should think of nothing else.

धीरेधीरे-, क्रमशः पूर्ण विश्वासपूर्वक बुद्धि के द्वारा समाधि में स्थित होना चाहिए और इस प्रकार मन को आत्मा में ही स्थित करना चाहिए तथा अन्य कुछ भी नहीं सोचना चाहिए |

यतो यतो निश्चलति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।

ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥ २६ ॥

yato yato niścalati
manaś cañcalam asthiram
tatas tato niyamyaitad
ātmany eva vaśaṁ nayet

From wherever the mind wanders due to its flickering and unsteady nature, one must certainly withdraw it and bring it back under the control of the Self.

मन अपनी चंचलता तथा अस्थिरता के कारण जहाँ कहीं भी विचरण करता हो, मनुष्य को चाहिए कि उसे वहाँ से खींचे और अपने वश में लाए |

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥ २७ ॥

praśānta-manasaṁ hy enaṁ
yoginaṁ sukham uttamam
upaiti śānta-rajasaṁ
brahma-bhūtam akalmaṣam

The yogī whose mind is fixed on Me verily attains the highest perfection of transcendental happiness. He is beyond the mode of passion, he realizes his qualitative identity with the Supreme, and thus he is freed from all reactions to past deeds.

जिस योगी का मन मुझ में स्थिर रहता है, वह निश्चय ही दिव्यसुख की सर्वोच्च सिद्धि प्राप्त करता है | वह रजोगुण से परे हो जाता है, वह परमात्मा के साथ अपनी गुणात्मक एकता

को समझता है और इस प्रकार अपने समस्त विगत कर्मों के फल से निवृत्त हो जाता है ।

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः ।

सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते ॥ २८ ॥

yuñjann evaṁ sadātmānaṁ
yogī vigata-kalmaṣaḥ
sukhena brahma-saṁsparśam
atyantaṁ sukham aśnute

Thus the self-controlled yogī, constantly engaged in yoga practice, becomes free from all material contamination and achieves the highest stage of perfect happiness in transcendental loving service to the Lord.

इस प्रकार योगाभ्यास में निरन्तर लगा रहकर आत्मसंयमी योगी समस्त भौतिक कल्मष से मुक्त हो जाता है और भगवान् की दिव्य प्रेमाभक्ति में परमसुख प्राप्त करता है ।

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।

ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥ २९ ॥

sarva-bhūta-stham ātmānaṁ
sarva-bhūtāni cātmani

īkṣate yoga-yuktātmā
sarvatra sama-darśanaḥ

A true yogī observes Me in all beings and also sees every being in Me. Indeed, the self-realized person sees Me, the same Supreme Lord, everywhere.

वास्तविक योगी समस्त जीवों में मुझको तथा मुझमें समस्त जीवों को देखता है | निस्सन्देह स्वरूपसिद्ध व्यक्ति मुझ परमेश्वर को सर्वत्र देखता है |

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥ ३० ॥

yo māṁ paśyati sarvatra
sarvaṁ ca mayi paśyati
tasyāhaṁ na praṇaśyāmi
sa ca me na praṇaśyati

For one who sees Me everywhere and sees everything in Me, I am never lost, nor is he ever lost to Me.

जो मुझे सर्वत्र देखता है और सब कुछ मुझमें देखता है उसके लिए न तो मैं कभी अदृश्य होता हूँ और न वह मेरे लिए अदृश्य होता है |

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।

सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते ॥ ३१ ॥

sarva-bhūta-sthitaṁ yo māṁ
bhajaty ekatvam āsthitaḥ
sarvathā vartamāno 'pi
sa yogī mayi vartate

Such a yogī, who engages in the worshipful service of the Supersoul, knowing that I and the Supersoul are one, remains always in Me in all circumstances.

जो योगी मुझे तथा परमात्मा को अभिन्न जानते हुए परमात्मा की भक्तिपूर्वक सेवा करता है, वह हर प्रकार से मुझमें सदैव स्थित रहता है ।

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन ।

सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ॥ ३२ ॥

ātmaupamyena sarvatra
samaṁ paśyati yo 'rjuna
sukhaṁ vā yadi vā duḥkhaṁ
sa yogī paramo mataḥ

He is a perfect yogī who, by comparison to his own self, sees the true equality of all beings, in both their happiness and their distress, O Arjuna!

हे अर्जुन! वह पूर्णयोगी है जो अपनी तुलना से समस्त प्राणियों की उनके सुखों तथा दुखों में वास्तविक समानता का दर्शन करता है ।

अर्जुन उवाच

योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन ।

एतस्याहं न पश्यामि चञ्चलत्वात्स्थितिं स्थिराम् ॥ ३३ ॥

arjuna uvāca
yo 'yaṁ yogas tvayā proktaḥ
sāmyena madhusūdana
etasyāhaṁ na paśyāmi
cañcalatvāt sthitiṁ sthirām

Arjuna said: O Madhusūdana, the system of yoga which You have summarized appears impractical and unendurable to me, for the mind is restless and unsteady.

अर्जुन ने कहा – हे मधुसूदन! आपने जिस योगपद्धति का संक्षेप में वर्णन किया है, वह मेरे लिए अव्यावहारिक तथा असहनीय है, क्योंकि मन चंचल तथा अस्थिर है ।

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् ।

तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥ ३४ ॥

cañcalaṁ hi manaḥ kṛṣṇa
pramāthi balavad dṛḍham
tasyāhaṁ nigrahaṁ manye
vāyor iva su-duṣkaram

The mind is restless, turbulent, obstinate and very strong, O Kṛṣṇa, and to subdue it, I think, is more difficult than controlling the wind.

हे कृष्ण! चूँकि मन चंचल (अस्थिर), उच्छृंखल, हठीला तथा अत्यन्त बलवान है, अतः मुझे इसे वश में करना वायु को वश में करने से भी अधिक कठिन लगता है ।

श्रीभगवानुवाच

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥ ३५ ॥

śrī-bhagavān uvāca
asaṁśayaṁ mahā-bāho
mano durnigrahaṁ calam
abhyāsena tu kaunteya
vairāgyeṇa ca gṛhyate

Lord Śrī Kṛṣṇa said: O mighty-armed son of Kuntī, it is undoubtedly very difficult to curb the restless mind, but it is possible by suitable practice and by detachment.

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा – हे महाबाहो कुन्तीपुत्रनिस्सन्देह ! चंचल मन को वश में करना अत्यन्त कठिन है; किन्तु उपयुक्त अभ्यास द्वारा तथा विरक्ति द्वारा ऐसा सम्भव है |

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मतिः ।

वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः ॥ ३६ ॥

asaṁyatātmanā yogo
duṣprāpa iti me matiḥ
vaśyātmanā tu yatatā
śakyo ’vāptum upāyataḥ

For one whose mind is unbridled, self-realization is difficult work. But he whose mind is controlled and who strives by appropriate means is assured of success. That is My opinion.

जिसका मन उच्छृंखल है, उसके लिए आत्मसाक्षात्कार कठिन - कार्य होता है, किन्तु जिसका मन संयमित है और जो समुचित उपाय करता है उसकी सफलता ध्रुव है | ऐसा मेरा मत है |

अर्जुन उवाच

अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः ।

अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति ॥ ३७ ॥

arjuna uvāca
ayatiḥ śraddhayopeto
yogāc calita-mānasaḥ
aprāpya yoga-saṁsiddhiṁ
kāṁ gatiṁ kṛṣṇa gacchati

Arjuna said: O Kṛṣṇa, what is the destination of the unsuccessful transcendentalist, who in the beginning takes to the process of self-realization with faith but who later desists due to worldly-mindedness and thus does not attain perfection in mysticism?

अर्जुन ने कहा: हे कृष्ण! उस असफल योगी की गति क्या है जो प्रारम्भ में श्रद्धापूर्वक आत्म-साक्षात्कार की विधि ग्रहण करता है, किन्तु बाद में भौतिकता के करण उससे विचलित हो जाता है और योगसिद्धि को प्राप्त नहीं कर पाता ?

कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव नश्यति ।

अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि ॥ ३८ ॥

kaccin nobhaya-vibhraṣṭaś
chinnābhram iva naśyati
apratiṣṭho mahā-bāho
vimūḍho brahmaṇaḥ pathi

O mighty-armed Kṛṣṇa, does not such a man, who is bewildered from the path of transcendence, fall away from both spiritual and material success and perish like a riven cloud, with no position in any sphere?

हे महाबाहु कृष्ण! क्या ब्रह्म-प्राप्ति के मार्ग से भ्रष्ट ऐसा व्यक्ति आध्यात्मिक तथा भौतिक दोनों ही सफलताओं से च्युत नहीं होता और छिन्नभिन्न बादल की भाँति विनष्ट नहीं हो जाता जिसके फलस्वरूप उसके लिए किसी लोक में कोई स्थान नहीं रहता?

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषत: ।
त्वदन्य: संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते ॥ ३९ ॥

etan me saṁśayaṁ kṛṣṇa
chettum arhasy aśeṣataḥ
tvad-anyaḥ saṁśayasyāsya
chettā na hy upapadyate

This is my doubt, O Kṛṣṇa, and I ask You to dispel it completely. But for You, no one is to be found who can destroy this doubt.

हे कृष्णयही मेरा सन्देह है !, और मैं आपसे इसे पूर्णतया दूर करने की प्रार्थना कर रहा हूँ | आपके अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा नहीं है, जो इस सन्देह को नष्ट कर सके |

श्रीभगवानुवाच

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते ।

न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति ॥ ४० ॥

śrī-bhagavān uvāca

pārtha naiveha nāmutra

vināśas tasya vidyate

na hi kalyāṇa-kṛt kaścid

durgatiṁ tāta gacchati

The Supreme Personality of Godhead said: Son of Pṛthā, a transcendentalist engaged in auspicious activities does not meet with destruction either in this world or in the spiritual world; one who does good, My friend, is never overcome by evil.

भगवान् ने कहा – हे पृथापुत्र! कल्याण-कार्यों में निरत योगी का न तो इस लोक में और न परलोक में ही विनाश होता है | हे मित्र! भलाई करने वाला कभी बुरे से पराजित नहीं होता |

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वती: समा: ।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥ ४१ ॥

prāpya puṇya-kṛtāṁ lokān
uṣitvā śāśvatīḥ samāḥ
śucīnāṁ śrīmatāṁ gehe
yoga-bhraṣṭo ’bhijāyate

The unsuccessful yogī, after many, many years of enjoyment on the planets of the pious living entities, is born into a family of righteous people, or into a family of rich aristocracy.

असफल योगी पवित्रात्माओं के लोकों में अनेकानेक वर्षों तक भोग करने के बाद या तो सदाचारी पुरुषों के परिवार में या कि धनवानों के कुल में जन्म लेता है |

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् ।
एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम् ॥ ४२ ॥

atha vā yoginām eva
kule bhavati dhīmatām

etad dhi durlabha-taraṁ
loke janma yad īdṛśam

Or [if unsuccessful after long practice of yoga] he takes his birth in a family of transcendentalists who are surely great in wisdom. Certainly, such a birth is rare in this world.

अथवा (यदि दीर्घकाल तक योग करने के बाद असफल रहे तो) वह ऐसे योगियों के कुल में जन्म लेता है जो अति बुद्धिमान हैं | निश्चय ही इस संसार में ऐसा जन्म दुर्लभ है |

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम् ।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन ॥ ४३ ॥

tatra taṁ buddhi-saṁyogaṁ
labhate paurva-dehikam
yatate ca tato bhūyaḥ
saṁsiddhau kuru-nandana

On taking such a birth, he revives the divine consciousness of his previous life, and he again tries to make further progress in order to achieve complete success, O son of Kuru.

हे कुरुनन्दनऐसा जन्म पाकर वह अपने पूर्वजन्म की दैवी ! चेतना को पुनः प्राप्त करता है और पूर्ण सफलता प्राप्त करने के उद्देश्य से वह आगे उन्नति करने का प्रयास करता है |

पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः ।

जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते ॥ ४४ ॥

pūrvābhyāsena tenaiva
hriyate hy avaśo 'pi saḥ
jijñāsur api yogasya
śabda-brahmātivartate

By virtue of the divine consciousness of his previous life, he automatically becomes attracted to the yogic principles – even without seeking them. Such an inquisitive transcendentalist stands always above the ritualistic principles of the scriptures.

अपने पूर्वजन्म की दैवी चेतना से वह न चाहते हुए भी स्वतः योग के नियमों की ओर आकर्षित होता है | ऐसा जिज्ञासु योगी शास्त्रों के अनुष्ठानों से परे स्थित होता है |

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः ।

अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् ॥ ४५ ॥

prayatnād yatamānas tu
yogī saṁśuddha-kilbiṣaḥ
aneka-janma-saṁsiddhas
tato yāti parāṁ gatim

And when the yogī engages himself with sincere endeavor in making further progress, being washed of all contaminations, then ultimately, achieving perfection after many, many births of practice, he attains the supreme goal.

और जब योगी कल्मष से शुद्ध होकर सच्ची निष्ठा से आगे प्रगति करने का प्रयास करता है, तो अन्ततोगत्वा अनेकानेक जन्मों के अभ्यास के पश्चात् सिद्धिलाभ करके वह परम - गन्तव्य को प्राप्त करता है|

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः ।

कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥ ४६ ॥

tapasvibhyo 'dhiko yogī
jñānibhyo 'pi mato 'dhikaḥ
karmibhyaś cādhiko yogī
tasmād yogī bhavārjuna

A yogī is greater than the ascetic, greater than the empiricist and greater than the fruitive worker. Therefore, O Arjuna, in all circumstances, be a yogī.

योगी पुरुष तपस्वी से, ज्ञानी से तथा सकामकर्मी से बढ़कर होता है | अतः हे अर्जुन तुम सभी प्रकार से योगी बनो !|

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ।
श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥ ४७ ॥

yoginām api sarveṣāṁ
mad-gatenāntar-ātmanā
śraddhāvān bhajate yo māṁ
sa me yukta-tamo mataḥ

And of all yogīs, the one with great faith who always abides in Me, thinks of Me within himself and renders transcendental loving service to Me – he is the most intimately united with Me in yoga and is the highest of all. That is My opinion

और समस्त योगियों में से जो योगी अत्यन्त श्रद्धापूर्वक मेरे परायण है, अपने अन्तःकरण में मेरे विषय में सोचता है और मेरी दिव्य प्रेमाभक्ति करता है वह योग में मुझसे परम अन्तरंग रूप में युक्त रहता है और सबों में सर्वोच्च है | यही मेरा मत है|